International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 20-11-2019; Accepted: 07-12-2019
www.hindijournal.com
Volume 5, Issue 6, December 2019, Page No. 68-69

श्रीमद्भगवद्गीता में निरूपित त्रिगुण एवं मानव व्यवहार

आशा रानी वर्मा
एसोसियेट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष संस्कृत विभाग, नेशनल (पी0जी0) कॉलेज, भोगाँव (मैनपुरी), उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
श्रीमद्भगवद्गीता को सभी उपनिषदों का सार माना जाता है। गीता में मनुष्य के परस्पर भिन्न–भिन्न स्वभाव का कारण उसके अन्दर निहित त्रिगुण को बताया गया है। त्रिगुण से तात्पर्य है सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण। सत्वगुण प्रकाशकारक और विकार रहित है, वह व्यक्ति को सुख और ज्ञान के अभिमान से बांधता है। रजोगुण, कामना और आसक्ति से उत्पन्न होता है, वह कर्मों और उनके फल से बांधता है। तमोगुण अज्ञान से उत्पन्न होता है, यह जीवात्मा को प्रमाद, अलास्य व निद्रा से बांधता है। प्रकृतिजन्य सभी पदार्थ त्रिगुणात्मक हैं। गीता में त्रिगुणातीत अवस्था का निरूपण कर ब्रह्मप्राप्ति का उपदेश दिया गया है।

मूल शब्दः त्रिगुण, सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण, प्रकृति

प्रस्तावना

भारतीय आध्यात्मिक वाङ्मय में 'प्रस्थानत्रयी' का विशेष स्थान है। प्रस्थान का अर्थ है – किसी उद्देश्य के लिए चल पड़ना और त्रयी का अर्थ है तीन का समूह। इस प्रकार जीवन की दिशा को निर्धारित करने वाले श्रेष्ठ तीन ग्रन्थ प्रस्थानत्रयी के अन्तर्गत आते हैं। ये ग्रन्थ हैं उपनिषद्, वेदान्त दर्शन और गीता। गीता को सभी उपनिषदों का सार माना जाता है जो मानव मात्र के लिए अमृत तुल्य है –

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः।
पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत्।।[1]

संसार में मनुष्यों का व्यवहार परस्पर भिन्न–भिन्न होता है। कोई उत्साही होता है तो कोई शान्त रहता है। किसी में क्रोध की अधिकता होती है तो कोई आलस्य में डूबा रहता है। गीता के अनुसार मनुष्य के इस स्वभाव का कारण उसके अन्दर निहित त्रिगुण हैं। त्रिगुण से तात्पर्य है – सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण। गीता के चौदहवें अध्याय में श्रीकृष्ण कहते हैं कि प्रकृति से उत्पन्न सत्व गुण, रजोगुण और तमोगुण मनुष्य को शरीर में बांधते हैं –

सत्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसम्भवाः।
निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनमव्ययम्।।[2]

श्रीकृष्ण अर्जुन को बताते हैं कि सत्वगुण निर्मल होने के कारण प्रकाशकारक और विकार रहित है। वह सुख के संबंध से और ज्ञान के संबंध से अर्थात् उसके अभिमान से बांधता है –

तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम्।
सुखसंगेन बध्नाति ज्ञानसंगेन चानघ।।[3]

श्रीकृष्ण बताते हैं कि रागरूप रजोगुण कामना और आसक्ति से उत्पन्न होता है। वह जीवात्मा को कर्मों के और उनके फल के सम्बन्ध से बांधता है –

रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासंगसमुद्भवम्।
तन्निबध्नाति कौन्तेय कर्मसंगेन देहिनम्।।[4]

अर्जुन को समझाते हुए कृष्ण तमोगुण का स्वरूप बताते हैं कि यह देहाभिमानियों को मोहित करने वाला और अज्ञान से उत्पन्न होने वाला है। यह जीवात्मा को प्रमाद, आलस्य और निंद्रा से बांधता है –

तमस्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम्।
प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत।।

'त्रिगुण' का उल्लेख गीता में सबसे पहिले द्वितीय अध्याय में आता है जहाँ श्रीकृष्ण अर्जुन को यह बताते हैं कि वेद तो त्रैगुण्यविषयक है लेकिन ब्राह्मी स्थिति की प्राप्ति के लिए त्रिगुण रहित होना पड़ेगा। इसलिए हे अर्जुन निस्त्रैगुण्य बनो –

त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन।[6]

इसी क्रम में आगे बढ़ते हुए तीसरे अध्याय में यह कहा गया है कि सभी जीव प्रकृतिजनित त्रिगुणों द्वारा परवश होकर कर्म करने में प्रवृत्त होते हैं –

कार्यते ह्यवशः कर्म सर्व प्रकृतिजैर्गुणैः।।[7]

जिनका अन्तःकरण अभिमान से मोहित हो रहा है वे अज्ञानीजन 'मैं कर्ता हूँ' ऐसा झूठा अभिमान करते हैं। सृष्टि व्यवहार प्रकृतिजन्य त्रिगुणों द्वारा ही संचालित हो रहा है, इस सिद्धान्त की उपेक्षा करके स्वयं में कर्ता होने का अभिमान आरोपित करके लोग अपनी अज्ञानता का ही परिचय देते हैं।
इसके विपरीत वे ज्ञानीजन जो इस सिद्धान्त को भली भांति स्वीकार करते हैं कि गुण ही गुण को बरत रहे हैं ऐसा जानकर वे गुणों में आसक्त नहीं होते हैं।

तत्ववित्तु महाबाहो गुणकर्म विभागयोः।
गुणागुणेषु वर्तन्त इति मत्वा न सज्जते।।[8]

गीता के चतुर्थ अध्याय में ब्राहमण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र इन चारों वर्गों के विभाजन का आधार भी गुण और कर्म को बताया गया है –

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।[9]

इसी अध्याय में श्रीकृष्ण यह कहते हैं कि गुणों के कार्यरूप सात्विक, राजस और तामस इन तीनों प्रकार के भावों में यह संसार मोहित है। जीव के बन्धन का हेतु माया भी त्रिगुणमयी है। क्षेत्र–क्षेत्रज्ञ विभाग योग नामक तेरहवें अध्याय में प्रकृतिजन्य सभी पदार्थ त्रिगुणात्मक बताये गये हैं। प्रकृतिस्थ पुरूष ही प्रकृतिजन्य त्रिगुणात्मक पदार्थों को भोगता है और इन गुणों के संग के कारण ही अधम और उत्तम योनि में जन्म लेता है। लेकिन प्रकृति के तत्व को जानने वाला ज्ञानी पुनर्जन्म को प्राप्त नहीं होता।[10]

इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि यह प्रकृति त्रिगुणात्मक है और उसी के अन्तर्गत आने वाला पंचभौतिक शरीर भी त्रिगुणात्मक है तथापि उस देह में रहने वाला परमात्मा त्रिगुणात्मक प्रभाव से परे रहता है। यही उस पुरूष रूप 'परम' की विशेषता है क्योंकि वह परमात्मा तो अनादि और निर्गुण है –

अनादित्वान्निर्गुणत्वात्परमात्मायमव्ययः।
शरीरस्थोऽपि कौन्तेय न करोति न लिप्यते।।[11]

जिस प्रकार सर्वत्र व्याप्त आकाश भी सूक्ष्म होने से लिप्त नहीं होता वैसे ही देहस्थ आत्मा दैहिक गुणों से निर्लिप्त रहती है।[12]

चौदहवें अध्याय में भगवान ने प्रकृति को सृष्टिरूपी गर्भ को धारण करने वाली माता और स्वयं को बीजप्रद पिता कहा है। गुणत्रय विभाग योग के उपदेश के संदर्भ में ही प्रकृतिजन्य त्रिगुणों को जीवात्मा को बांधने वाला कहा गया है। गुणों के विवेचन के प्रसंग में यह कहा गया है कि सतोगुण सुख में, रजोगुण कर्म में और तमोगुण प्रमाद में लगाता है। ये तीनों गुण परस्पर प्रतिस्पर्धात्मक भाव रखते हैं और एक दूसरे को अभिभूत करके अपनी–अपनी अभिव्यक्ति के लिए प्रयत्नशील रहते हैं –

सत्त्वं सुखे सज्जयति रजः कर्मणि भारतः।
ज्ञानामावृत्य तु तमः प्रमोद सञ्जयत्युतः।।
रजस्तमश्चाभिभूय सत्तवं भवति भारत।
रजः सत्त्वं तमश्चैव तमः सत्त्वं रजस्तथा।।[13]

इन तीन गुणों में से किस समय कौन सा गुण बढ़ा हुआ है इस बात का निर्धारण करने के विषय में कहा गया है कि जब देह तथा अन्तःकरण में चेतनता और विवेकशीलता का भान हो, तब समझना चाहिये कि सत्त्वगुण सर्वोपरि है। लोभ, स्वार्थ और भोगलिप्सा की भावना जब बढ़ी हो तो उस समय रजोगुण का प्राधान्य मानना चाहिये। जब मोह, कर्तव्य कर्म के प्रति उपेक्षा व उदासीनता, निंद्रा आदि के लक्षण हों तो उस समय तमोगुण की वृद्धि समझना चाहिये। यदि सतोगुण की वृद्धि की अवस्था में शरीरांत होता है तो जीव को निर्मल दिव्य लोक की प्राप्ति होती है। रजो गुण की वृद्धि के समय मृत्यु होने पर उसका जन्म कर्मासक्त मनुष्यों के बीच होता है जबकि तमोगुण की प्रधानता के समय देहांत होने पर जीव मूढ़ योनियों में उत्पन्न होता है। इसके विपरीत जिस ब्राह्मी अवस्था में पहुँचकर दृष्टा जीव इस बात का अनुभव कर लेता है कि मैं स्वयं अकर्ता ही हूँ तब त्रिगुणातीत वह परमजीव परमानन्द को प्राप्त होता है। गीता में इसके बाद त्रिगुणातीत अवस्था का निरूपण कर अव्याभिचारिणी भक्ति योग के द्वारा ब्रह्म प्राप्ति का उपदेश दिया गया है।

गीता के सत्रहवें अध्याय में तीनों गुणों के अनुसार त्रिविध श्रद्धा का निरूपण किया गया है –

त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनां सा स्वभावजा।
सात्तिवकी राजसी चैव तामसी चेति तां शृणु।।[14]

अपने द्वारा अर्जित गुणों के अनुरूप ही मनुष्य विशेष श्रद्धा से युक्त होता है। इसी अध्याय में आहार की त्रिविधरूपता, याज्ञिक कर्मों की त्रिविधरूपता बताई गई है। अट्ठारवे अध्याय में गुणों के भेद से ज्ञान, कर्म तथा कर्ता का निरूपण किया गया है। साथ ही त्रिविध ज्ञान, त्रिविधि कर्म तथा त्रिविधकर्ता, त्रिगुणानुसारी बुद्धि तथा धृति के भेद बताये गये हैं। भगवान श्रीकृष्ण ने इस बात की स्पष्ट घोषणा की है कि पृथ्वी या आकाश में अथवा देवताओं में कहीं भी कोई भी तत्व ऐसा नहीं है जो प्रकृति से उत्पन्न सत, रज और तम के गुण से रहित है।

आज प्रत्येक व्यक्ति चाहे शैक्षिक जगत से जुड़ा हो या राजकीय सेवा से या व्यवसाय जगत सभी को सत्व गुण में वृद्धि की आवश्यकता है। इसके अभाव में कर्तव्य को भुला दिया जाता है। हर मनुष्य अधिकार की अपेक्षा करता है। जिससे अनुशासनहीनता और असंतोष की भावना बढ़ती है। इन स्थितियों में गीता का त्रिगुण निरूपण समाज को कर्तव्य पथ पर बढ़ने की शिक्षा दे सकता है। प्रदत्त कर्मों की पूर्ति करने वाले और शुद्ध बुद्धि वाले मनुष्य ही अपना कल्याण करने के साथ ही विश्व का कल्याण कर सकते हैं।

संदर्भ सूची

1. गीता महात्म्य, श्लोक सं0–06, गीता प्रेस, गोरखपुर।
2. श्रीमद्भगवद्गीता, 14.5, भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट, मुम्बई।
3. वही, 14.6
4. वही, 14.7
5. वही, 14.8
6. वही, 2.45
7. वही, 3.5
8. वही, 3.28
9. वही, 4.13
10. वही, 13.24
11. वही, 13.32
12. वही, 13.33
13. वही, 14.9, 10
14. वही, 17.2